ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-12*January- 2022
Innovation The Research Concept

प्राचीन भारतीय समाज में बौद्ध धर्म एवं प्रतीक पूजा (बौद्ध धर्म के उदय से लेकर 12 वीं शताब्दी तक)

Buddhism and Symbol Worship in Ancient Indian Society (From The Rise of Buddhism to the 12th Century)

Paper id: 15673 Submission: 11/01/2022, Date of Acceptance: 21/01/2022, Date of Publication: 23/01/2022

प्रमोद कुमार
सहायक आचार्य,
इतिहास-विभाग,
श्रीमती नर्बदा देवी बिहानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नोहर जिला हनुमानगढ़, राजस्थान, भारत

विजेन्द्र शक्रवाल
शोधार्थी
इतिहास विभाग,
महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर,
राजस्थान, भारत

सारांश

प्राचीन भारतीय समाज में बौद्ध धर्म एवं प्रतीक-पूजा (बौद्ध धर्म के उदय से लेकर 12 वीं शताब्दी तक) में बौद्ध धर्म के सत्य, वस्तुनिष्ठ व तथ्य रूपों के साथ-साथ चलते बौद्ध धर्म के दो सम्प्रदायों का वर्णन करते हुये मौर्यवंश के बाद बौद्ध धर्म को मन्दिरों व मूर्तियों में और अनेक प्रतीक चिन्हों में यहाँ वर्णित किया गया है। इस प्रस्तुत लेख में बताया गया है कि किस प्रकार मौर्य वंश यानी सम्राट अशोक के समय तक भगवान बुद्ध को एक गुरू, पूज्य संस्थापक व एक महामानव के रूप में माना गया, किस प्रकार से बुद्ध एक उपास्य देव नहीं थे, किस प्रकार निर्वाण की प्राप्ति धर्म पालन तक संभव थी। बौद्ध धर्म में महायान के उदय के साथ धीरे-धीरे बुद्ध कैसे देव का रूप लेते गये, भगवान बुद्ध ही नहीं बल्कि बोधिसत्वों, बौद्ध देवीयों जैसे देवी तारा व बौद्ध धर्म में प्रतीक-पूजा आरम्भ हुई और बौद्ध धर्म भी धीरे-धीरे सत्य की ज्योति से निकल कर घहन अन्धकार में डूब गया जो वर्तमान में अपनी पहचान खो रहा है।

Buddhism and Symbol-worship in ancient Indian society (from the rise of Buddhism to the 12th century) describing two sects of Buddhism moving along with true, objective and factual forms of Buddhism. Dharma is described here in temples and idols and in many symbols. In this present article it has been told how Lord Buddha was considered as a Guru, revered founder and a great human till the time of Maurya dynasty i.e. Emperor Ashoka, how Buddha was not a worshiped god, how to attain Nirvana. Religion was even possible. With the rise of Mahayana in Buddhism, how Buddha gradually took the form of a deity, not only Lord Buddha, but Bodhisattvas, Buddhist goddesses like Goddess Tara and symbol-worship started in Buddhism and Buddhism also gradually became the light of truth. Coming out of it sank into the deep darkness, which is currently losing its identity.

मुख्यशब्दः अदृश्य पक्ष, तथ्यात्मक, अनवरत, निर्वाण, देशनल, आत्मदीपोभवः, महाप्रत्यंगिरा।
Keywords: The Invisible Side, The Factual, The Constant, The Nirvana, The Country, The Self-Dipabhavan, The Mahaptyangira.

प्रस्तावना

प्राचीन भारत में बौद्ध धर्म का उदय छठी शताब्दी में हुआ यह धर्म एक सत्य स्वरूप का अखण्ड प्रकाश है जगत के कल्याण हेतु, सत्य के निर्वाण मार्ग पर चलने हेतु प्रेरित करने वाला और तृष्णा रूपी इच्छा का नाश करने वाला धर्म है बौद्ध धर्म प्राचीन भारतीय वैदिक परम्परा से भिन्न और अपने अलग नियमों से मानवीय स्वरूप के उच्च गौरव की स्थापना हेतु प्रत्यनशील है। बौद्ध धर्म के उदय से लेकर 12 वीं शताब्दी तक के काल में इसमें कुछ परिवर्तन सम्भव हुये जैसे इसमें हीनयान व महायन का उदय हुआ, बौद्ध धर्म में महायान के माध्यम् से प्रतीक पूजा का उदय हुआ और हिन्दु देवो के समान बुद्ध को भी एक अवतारी एक अलौकिक स्वरूप में पूजा जाने लगा और वर्तमान में बौद्ध धर्म अपने सत्य मार्ग से दूर जाता नजर आ रहा है।

शोध विधि

इस पेपर हेतु मेरे द्वारा यहाँ प्राथमिक और अप्राथमिक दोनों ही स्त्रोतों से तथ्य पूर्ण जानकारी प्रस्तुत की गई है। प्राचीन भारतीय इतिहास के स्त्रोतों, प्राचीन भारत की महत्वपूर्ण पुस्तकों का अध्ययन व कुछ बौद्ध स्थलों की यात्रा करने के बाद वस्तुनिष्ठ अध्ययन सामग्री प्रस्तुत करने का एक प्रयास किया गया है।

प्राचीन भारतीय समाज में बौद्ध धर्म का उदय व इसमें प्रतीक पूजा का प्रचलन

बौद्ध धर्म वैदिक परम्परा से अलग है और यह धर्म वैदिक हिंसा या वैदिक कर्मकाण्ड के विरूद्ध प्रकट नहीं हुआ है। बौद्ध धर्म तो मानवीय रूप के उच्च गौरव की स्थापना हेतु एक स्वतन्त्र विचार है इस धर्म में व्यक्ति और समाज उनकी धार्मिक नीति, उनके जीवन के दृश्य पक्ष व अदृश्य पक्ष के उद्देश्यों का वर्णन मात्र है, बौद्ध धर्म मानव का तथ्यात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। मानव के जीवन के आन्तरिक पक्ष और उसकी बाहरी समस्याओं का विशेष विवेचन करने में यह धर्म पूर्णरूप से सहयोगी रहा है। यह धर्म समाज और धर्म के क्षेत्र में फैलाये गये झूठे विश्वास, झूठी अवधारणा और रूढ़िवादी कर्म

का विरोध बौद्ध धर्म सुधारक या विद्रोह के स्वरूप नहीं करता बल्कि उसका यह विरोध या प्रतिरोध उसकी अपनी घोषणाओं या स्थापनाओं और आदर्शों के फलस्वरूप करता है।

बौद्ध धर्म जिस मानवीय गौरव या फिर आदर्श को साध्य मानता है उसके विरूद्ध जितने भी मत या फिर वाद, विवाद है वे स्वतः ही उसके प्रतिपक्ष में आ जाते हैं। उसका अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन, व्याख्या तथा विरोध उसके अपने सिद्धान्तों की वजह से है, जो भी उन सिद्धान्तों के प्रतिपक्ष में है, वे स्वतः ही उसके विरोध में खड़े दिखाई देते हैं तथा ऐसा लगता है कि यह पक्ष या प्रतिपक्ष है लेकिन सत्य तो यह है कि भगवान बुद्ध द्वारा प्रारम्भ किये गये बौद्ध धर्म की अपनी एक अलग परम्परा है।

भगवान बुद्ध विश्व के लिये एक शांति और सद्भाव के प्रणेता है, बुद्ध का विचार था कि सम्पूर्ण संसार में दुःख है, क्योंकि जगत के सभी पदार्थ अनित्य और नष्टवान होने के कारण दुःख पैदा करते हैं। मनुष्य के अन्दर काम, क्रोध, लोभ तथा मोह जैसी प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती रहती है जो सदैव दुःख को उत्पन्न करती रहती है, बुद्ध ने कहा कि मनुष्य जिसे सुख समझता है वह भी वस्तुतः दुखात्मक है, क्योंकि पहले सुख की प्राप्ति हेतु मानव को अनेक प्रकार के कष्ट झेलने पड़ते हैं और फिर इस सुखी प्रवृति को बनाये रखने के लिये व आखिर में उस सुखी प्रवृति के नष्ट होने पर दुःखी होता है। बुद्ध का कहना था कि मृत्यु की प्राप्ति होगी यह कठोर सत्य है मगर मृत्यु से बचने की अनेक कोशिशों के बाद भी उससे बचा नहीं जा सकता यह भी एक दुःख है। मृत्यु के उपरान्त व्यक्ति अपने अधुरे कार्यों या कर्मो को पूर्ण करने हेतु पुनःजन्म या फिर उसके कर्म जन्म हेतु पैदा होता है और फिर वह इस संसार में दुःख झेलता है इस प्रकार दुःख का अनवरत चक्र नियमित रूप से चलता रहता है।

भगवान बुद्ध का यह मानना था कि इस संसार में दुःखी लोगों ने जितने आँसू बहाये उसके आगे तो जल से भरे महासागर भी कम पड़ गये। बुद्ध स्वयं दुःख के कारणों की खोज के प्रयास में महावैध का रूप धारण करते हैं तथा संसार की मानव जाति को दुःखों की पीड़ाओं से मुक्ति देने के लिये कारणतम् मूलक उचित व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। वे द्वादशांग चक्र के माध्यम् से दुःख की खोज करते हुये अविद्या तक पहुँचते हैं। उनका मानना था कि अगर अविद्या को नष्ट कर दिया जाये तो फिर दुख रूपी समुदाय से मुक्ति प्राप्त अवश्य होगी, इस हेतु निर्वाण के मार्ग पर जीव को आगे बढ़ना होगा और इसके लिये जीवन में अष्टांगिक मार्ग उत्तम है।[1]

सम्यक रूप से वस्तुओं को देखते हुए यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर सत्य तथा प्रिय वचनों का प्रयोग मानव जीवन में करना होगा बुद्ध ने कहा था कि बुरे विचारों को मन से बाहर निकालना ही मानव का श्रेष्ठ व्यायाम है।

भगवान बुद्ध ने सामाजिक और नैतिक पक्ष को उजागर करते हुये कहा था कि जन्म आधारित वर्णभेद मानव के विकास के लिये एक बाधा है, जन्म से कोई ब्राह्मण या फिर शुद्र नहीं मान जाता वरन कर्म ही मानव की पहचान है, सभी वर्णों के लोग निर्वाण प्राप्त कर सकते हैं।

भगवान बुद्ध ने जो धर्म चलाया वह धर्म सभी वर्णों के लिये खुला था, उनके धर्म में किसी भी प्रकार की ऊंच नीच या भेद-भाव की प्रवृति नहीं थी, बुद्ध ने अपने धर्म में स्त्रियों को प्रवेश दिया। उन्हें उच्च आदर्शमय जीवन व्यतीत करने वाले और शुद्ध आचरण से मुक्त ब्राह्मण श्रेष्ठ लगते थे तथा बुद्ध ऐसे ब्राह्मणों की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते थे।

प्राचीन भारतीय समाज अनेक सामाजिक, धार्मिक समस्याओं से जूझता रहा भारतीय संस्कृति में अपने वर्गो व सम्प्रदायों में विखण्डन की स्थिति उत्पन्न होती रही। ऐसे समय में भारत वर्ष में एक ऐसे औषधालय व वैध की आवश्यकता थी जिसके प्रभाव से इन सामाजिक, धार्मिक समस्याओं, व्यक्ति विशेष के दुःखों और उनकी उदासी का ईलाज संभव हो, व्यक्ति की इन समस्याओं के निराकरण हेतु ज्ञान के औषधालय के माध्यम् से मानव को तर्क, विवके व गुणदोष की खुराक देने के लिये भगवान बुद्ध का एक वैध के रूप में उदय हुआ।

भारत वर्ष का मानव हमेशा से अपने धर्म से गहरा सम्बन्ध रखता आया है इस भारत भूमि पर अनेक धर्म पैदा हुये। उनमें से कुछ धर्म वर्तमान में अपनी पहचान बनाये हुये हैं, परन्तु जिस धर्म से भारत को पहचान मिली, जो धर्म इसी भूमि में पैदा हुआ जिससे व्यक्ति में तर्क पैदा करने की शक्ति आई जो सामाजिक समानता व राष्ट्रीय वातावरण के कल्याण के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ, जिसकी ज्ञान ज्योति पुरे संसार में फैली। उसी ज्ञान रूपी तर्क के धर्मवृक्ष को भारत वर्ष के लोग भूल गये जी आप सही समझे मैं किसी अन्य धर्म की बात न करते हुये शाक्यसिंह, शाक्यमुनि, एशिया के ज्योतिपुंज, महावैद्य, सर्वसिद्ध तथागत तथा देशनल भगवान गौतम बुद्ध के द्वारा संचालित प्राचीन भारत में फैले बौद्ध धर्म की बात कर रहा हूं।

वर्तमान समय में प्राचीन भारतीय समाज में बौद्ध धर्म एवं प्रतीक पूजा (बौद्ध धर्म के उदय से लेकर 12 वीं शताब्दी तक) लेख फलदायी सिद्ध हो ऐसा मेरा मानना है, और मेरा यह भी विश्वास है कि भगवान बुद्ध द्वारा अपने जीवन भर किये गये प्रयासों को अवश्य रंग मिलेगा उनके द्वारा सम्पूर्ण मानव समाज को एक कुटुम्ब के रूप में देखने हेतु उनकी त्याग तपस्या आज के राष्ट्रीय वातावरण में संजीवनी का काम

करेगी। भगवान बुद्ध की मृत्यु के पश्चात प्राचीन भारत में बौद्ध धर्म का प्रचार व प्रसार हुआ, जब तक भगवान बुद्ध जिन्दा रहे तब तक इस धर्म का प्रसार संघ के माध्यम् से होता रहा उनके जाने के बाद भी संघ प्रभावशाली बने रहे मगर धीरे-धीरे बौद्ध धर्म में सम्प्रदाय बने और सम्प्रदायों में भी हीनमान व महायान महत्वपूर्ण रहे और अब शुरू हुआ वो दौर जो बौद्ध धर्म को प्रतीक पूजा के रूप में पहचान देने लगा।

भगवान बुद्ध जब मृत्यु को प्राप्त हुये तो उनके शरीर की अस्थि और भस्म को आठ भागों में बाँटा गया तथा बाँटे गये आठ भागों पर ही चैत्यों का निर्माण करवाया गया।

भगवान बुद्ध के अस्थिवशेषों पर चैत्य निर्माण करवाने वालों में मगध सम्राट अजातशत्रु, वैशाली के लिच्छवि और अल्लकल्प के बुल्ली मुख्य थे। राजगृह के चैत्य से पता चलता है कि चैत्यों में किस प्रकार की कारीगरी, कितना खर्चा व चैत्य की महता क्या थी। मौर्य वंश के महान सम्राट अशोक ने कभी भी भगवान बुद्ध की मूर्ति नहीं बनवाई क्या कारण रहा होगा कि 84 हजार बौद्ध स्तूपों का निर्माण कराने वाला सम्राट अशोक बुद्ध की मूर्ति को महत्व नहीं दे रहा था, कारण स्पष्ट था अशोक बौद्ध धर्म के सम्प्रदाय हीनयान को मानने वालों में से एक था। बौद्ध धर्म का हीनयान सम्प्रदाय स्थविर से पैदा हुआ। इसे श्रावकयान या बुद्धयान भी कहते हैं हीनयान एक व्यक्ति वादी सम्प्रदाय या धर्म है इसका मानना है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने प्रयासों से मोक्ष का मार्ग ढूंढना चाहिये। यह सम्प्रदाय बुद्ध को महापुरूष के रूप मंे देखता है देवता के रूप में बुद्ध को अस्वीकृत करता है, यह सम्प्रदाय बुद्ध के आत्मदीपोभवः को स्वीकृत करता है हीनयान को मानने वाला समुदाय बुद्ध की मूर्तिपूजा नहीं करता बल्कि बोधिवृक्ष, स्तूप, धर्मचक्र, वज्रासन, वृक्ष, उष्णीय, पदचिन्ह अदि प्रतीक चिन्हों की पूजा करता है। बुद्ध का प्रिय शिष्य आनन्द था बुद्ध ने आनन्द से कहा था कि हे आनन्द मेरे जाने के बाद मेरे अस्थिवशेषो व धातुओं की पूजा प्रचलित रहे मगर मुझे मूर्ति के रूप में कभी न पूजा जाये।[2]

भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात उनकी धातु वस्तुओं को आदर की दृष्टि से देखा जाने लगा। ईसवी सन् के आरम्भ होते ही बौद्ध धर्म के सम्प्रदाय महायान का प्रचलन हुआ और अब बौद्ध धर्म के इतिहास में भगवान बुद्ध और बोधिसत्व की पूजा शुरू हुई। वर्तमान में भी अगर देखा जाये तो कोलकत्ता में बने अजायबघर में गौतम बुद्ध की बहुत प्राचीन एक मूर्ति सुरक्षित रूप में है। इस मूर्ति का समय ईसवी सन् 142 रहा होगा।

कुषाण वंश के महान शासक कनिष्क के काल से यानी लगभग प्रथम सदी ई.पू. के कुछ समय पहले भारत भूमि पर उदय हुये बौद्ध धर्म में एक नये आदर्श का जन्म हुआ जिसे एक बड़े जन समुदाय के कल्याण हेतु उत्पन्न किया गया और नाम दिया महायान। महायान ने मनुष्य जीवन का एक उच्च आदर्श प्रस्तुत किया महायान के अनुसार कोई भी वस्तु ऐसी नहीं हो सकती जिसे मनुष्य या किसी भी प्राणी के लाभ हेतु आदेश समझा जा सके। प्राणीमात्र के कल्याण हेतु महायान ने चरम साधना पर बलदिया और बोधिसत्व-जीवन पर बल दिया। बौद्ध धर्म के महायान में बोधिसत्व का अर्थ एक ऐसे मानव या व्यक्ति से था जो अन्य लोगों, प्राणीयों या जानवरों के कल्याण हेतु अपने राष्ट्र, घर और सुख को त्याग दे, किसी अन्धे व्यक्ति को अपनी आँखे दान कर दे, भूखे शेर को अपना शरीर देकर उसकी भूख को शान्त कर दे और दूसरे के हित हेतु अपनी पत्नी व बच्चों का उत्सर्ग या त्याग कर दे, किसी के कष्ट को अपना कष्ट समझे ऐसे मानव को बौद्ध धर्म के महायान सम्प्रदाय में बोधिसत्व नाम दिया गया।

महायान सम्प्रदाय में भगवान बुद्ध को देवस्वरूप में प्रतिपादित करना शुरू कर दिया। प्राचीन भारतीय समाज में अनेकों सम्प्रदाय प्रचलन में थे जैसे भागवत, शैव, वैष्णव आदि इन सम्प्रदाय के लोग भक्ति को बड़ा महत्व देते थे। बौद्ध धर्म के सम्प्रदाय महायान के प्रतिपादकों ने भगवान गौतम बुद्ध के 'सत्य स्वरूप' को ही जन-समुदाय के सामने प्रस्तुत किया। महायान प्रतिपादकों ने भगवान बुद्ध के स्वरूप को मूर्ति का आकार दिया और बुद्ध की मूर्ति बननी आरम्भ हुई अब इन मूर्तियों को बौद्ध भिक्षुओं हेतु बने चैत्यों में स्थापित किया जाने लगा।[3] बोधिसत्वों में अवलोकितेश्वर, वज्रपाणि, सामन्तभद्र, आकाशगर्म, महास्थानप्राप्त-भैष्यराज तथा मंजुश्री, मैत्रेय[4] प्रमुख हैं बौद्ध चैत्यों में इन सभी की मूर्तियाँ भी स्थापित होने लगी तथा भगवान बुद्ध के समान इन सभी की पूजा भी आरम्भ हुई।[5]

हिन्दू धर्म देवों के साथ-साथ देवियों को भी उच्च स्थान देता है इसी हिन्दू धर्म की देवी आस्था को देखते हुय बौद्ध धर्म ने भी देवी पूजा को प्रमुख स्थान दिया। बौद्ध धर्म में 'देवी तारा' का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण माना गया है। प्राचीन भारत के इतिहास में आठवी शताब्दी से लेकर बाहरवीं शताब्दी तक 'देवी तारा' बौद्ध धर्म में अत्यन्त लोकप्रिय हो गई। बौद्धों की देवी तारा के सम्मान में प्राचीन भारत में जगह-जगह देवी तारा के मन्दिर और घर-घर में प्रतिमाएँ स्थापित की जाने लगी।[6]

महायानियो द्वारा प्रज्ञा पारिमता देवी तारा[7] जिसको तांत्रिक बौद्धों ने अतिशय सुन्दर एवं उदार प्रवृति, शान्त रूपा माना है। बौद्धों की यह देवी हिन्दुओं की देवी लक्ष्मी जैसी प्रतीत होती है प्राचीन भारत के इतिहास में इसे गज लक्ष्मी के नाम से भी जाना जाता है।

देवी तारा के मंजुश्री मूलकल्प में अनेक नाम मिलते हैं जैसे मामकी, लोचना, श्वेता, पंडाखासिनी और कुतरा ऐसा विवरण मिलता है कि तारा की उत्पत्ति अवलोकितेश्वर की अश्रुधारा से हुई। मारीची तथा

एकजटा दोनों देवी तारा की सहयोगी रही है बौद्ध धर्म के आरम्भ के इतिहास विवरण में देवी तारा को भगवान बुद्ध की पत्नि माना गया। धीरे-धीरे देवी तारा को बौद्ध धर्म को मानने वाले पुरे समुदाय की माता का दर्जा प्राप्त हुआ। 'महाप्रत्यंगिरा धारणी' में तारा को सर्वश्रेष्ठ देवी कहा गय। बौद्धों का मानना है कि देवी तारा उनकी त्रासदी में सहायता करती थी। हरे तथा सफेद वर्णों वाली देवी तार का रूप सर्वाधिक प्रसिद्ध माना जाता था। देवी के गले में वज्रों की माला और मुकुट में देवी के वैरोयन का चित्र प्रदर्शित किया जाता था।[8]

तांत्रिक बौद्धों का मानना था कि तारा के अनेक वर्णों में से श्याम, सित, पीत, नील और रक्त वर्ण बौद्ध भक्तों को बहुत प्रिय लगते थे। बौद्ध भक्त देवी तारा को धन की देवी के रूप में भी पूजते थे बौद्ध भक्त देवी तारा को मन्त्रोच्चारण से भी पुकारते थे जैसे "ॐ तारे तुत्तारे-तुरे धनं ददे स्वाहा" ऐसा माना जाता है कि इस प्रकार के मन्त्रोच्चारण से खुश होकर तारा बौद्ध भक्त को अतुल धन प्रदान करती थी।

प्राचीन भारत के इतिहास में अगर बौद्ध मूतिकला की बात की जाये तो मौर्यो के पश्चात आने वाला शुंगकाल बौद्ध मूर्तिकला के लिये बहुत प्रसिद्ध रहा था।[9] शुंगकाल की मूर्ति भारतीय कला की मुकुटमणि थी। मगर शुंगकाल में बौद्ध धर्म के हीनयान सम्प्रदाय का प्रभाव था अब तक महायान का उदय नहीं हो पाया था इसलिये यहाँ भगवान बुद्ध की मूर्ति के निर्माण के साक्ष्य कम ही प्राप्त होते हैं। शंुगकाल के बाद भारतीय इतिहास में कुषाणों का उदय हुआ। कुषाण काल में बौद्ध धर्म का महायान सम्प्रदाय पूर्ण विकसित रूप ले चुका था। अब भगवान बुद्ध की पूजा हेतु प्रतिमा बनने लगी थी भगवान बुद्ध की शुद्ध प्रतिमा का निर्माण अमरावती तथा मथुरा में साथ-साथ हुआ। प्राचीन भारत के इतिहास में मथुरा में भगवान बुद्ध की मूर्ति भारतीय कला का उत्कृष्ट और विशुद्ध रूप है। जिसमें मगध की यक्ष-यक्षिणी मूर्ति का साम्य, मृदुलता तथा पोष्टिकता का अनुपम निखार हुआ है। बिहार राज्य में भगवान बुद्ध की जो प्रथम मूर्ति बनी वह मूर्ति बोधगया से प्राप्त हुई है। यह मूर्ति मथुरा के लाल पत्थर से बनी है।[10] सारनाथ नामक स्थल से भगवान बुद्ध और बोधिकतों की अनेक प्रतिमाऐं प्राप्त हुई है जो कला के दृष्टिकोण से बड़ी अदभुत है। सारनाथ से मिली धर्म चक्र प्रर्त्तन मुद्रा में बैठी भगवान बुद्ध की प्रतिमा इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।[11]

प्राचीन भारत के इतिहास में गुप्त काल बौद्ध धर्म में अहम स्थान रखता है। क्योंकि गुप्तों के समय में एक ऐसे चीनी यात्री ने यहाँ बौद्ध धर्म की स्थिति का वर्णन किया जो बौद्ध धर्म के प्रति गुप्तों की श्रद्धा को प्रकट करता है। वो चीनी यात्री फाह्यान था जो यहाँ 399 ई. से 414 ई. के बीच रहा। फाह्यान ने यहाँ हीनयानी व महायानी बौद्ध भिक्षुओं का वर्णन किया साथ ही साथ उसने ऐसे बौद्ध स्तपों का वर्णन भी किया जो सुवर्ण व रजत आदि धातुआंे से बने थे। वह बताता है कि उसने तक्षशिला में एक ऐसे स्तूप को देखा जिसकी पूजा करने हेतु अनेक दिशाओं के सम्राट, मन्त्री और धनाढ़य व्यक्ति आते थे। फाह्यान जब भारतीय यात्रा में पुरूषपुर गया तो उसने वहाँ सम्राट कनिष्क द्वारा बनाये गये स्तूप को भी देखा चीनी यात्री ने इस स्तूप की बहुत ही अधिक प्रशंसा की। नगरदेश में उसने स्तूप देखा जो इस देश की राजधानी में क्रमशः भगवान बुद्ध के कपाल की हड्डी और दाँत पर निर्मित स्तूप थे।[12]

प्राचीन भारत के विभिन्न क्षेत्रों में फैले बौद्ध धर्म के सम्प्रदायों की जानकारी जो पाँचवी शताब्दी के सम्बन्ध में दी गई उसमें जो कुछ कमी रह गयी थी उसकी पूर्ति सातवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में प्राचीन भारत में आने वाले एक अन्य चीनी यात्री जिसका नाम ह्वेनसांग था ने कर दी। इस चीनी यात्री ने न केवल बौद्ध धर्म के सम्प्रदाय हीनयान व महायान का उल्लेख किया बल्कि इस बात का भी खुलासा किया कि वे किस उप-सम्प्रदाय से अपना सम्बन्ध रखते थे। चीनी यात्री ह्वेनसांग द्वारा दिये गये वृत्तात से पता चलता है कि चीनी यात्री फाह्यान के समय में जो हीनयानी केन्द्र था वो केन्द्र ह्वेनसांग के समय तक हीनयानी केन्द्र के रूप में लगभग वर्तमान में जारी रहा।[13]

भारतीय इतिहास में पाल वंश का इतिहास बौद्ध कला के लिये प्रसिद्ध रहा है इस काल में बौंद्ध मातृ देवियों की मूर्तियाँ प्रचुर मात्रा में बनी। भगवान बुद्ध की करूणामय मुखाकृति और सुड़ौल अंगों का कलात्मक प्रदर्शन हुआ। पाल वंश के इतिहास में इनकी राजधानी जो ओदंतपुरी थी जो वर्तमान में नालंद जिले का समृद्धनगर है। यहाँ बौद्ध मूर्तियों का बड़ी संख्या में निर्माण हुआ। यहाँ बनी बौद्ध देवताओं की मूर्तियों की एक खास विशेषता यह रही है कि हिन्दू धर्म के सभी सम्प्रदायों के अनेक रूप इन बौद्ध मूर्तियों में दिखलाये गये।[14]

बौद्ध धर्म के प्रतीक चिन्ह

प्राकल्पना

मानव की तथ्यात्मक शक्ति के उदय में सहायक है।
रूढ़िवादी अवधारणाओं का विनाशक है।
बौद्ध प्रतीक पूजा से सत्य की शक्ति का ज्ञान अधुरा है।
मानव कल्याण में प्रतीक पूजा सहायक नहीं।
सत्य की पहचान हेतु बौद्ध दर्शन जरूरी है।

अध्ययन का उद्देश्य

जगत के कल्याण हेतु।
आत्मदीपोभवः हेतु।
दुःख के कारणों की खोज हेतु।
भारत वर्ष की पहचान के लिये।

निष्कर्ष

प्राचीन भारतीय समाज में बौद्ध धर्म सत्य, वस्तुनिष्ठ के रूप में आरम्भ हुआ मगर धीरे धीरे इस तथ्य रूपी धर्म में परिवर्तन आने लगे और अब यही सत्य रूपी वृक्ष एक अलौकिक व अवतारी रूप में प्रकट हुआ कभी वस्तुनिष्ठा के साथ चलने वाला बौद्ध धर्म अब व्याख्या के रूप में प्रस्तुत होने लगा। अपने सत्य स्वरूप को खो कर झूठी अवधारणाओं व रूढ़िवादी कर्मों में प्रवेश कर गया अब इसमें मूर्ति व प्रतीक पूजा ने अपना अहम स्थान प्राप्त कर लिया जो अपने वास्तविक रूप को भूल चूका है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *बौद्ध धर्म के विविध आयाम - डॉ. प्रीति कुमारी, पृ.सं. - 64-77*
   बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना, नवम्बर 2016
2. *भारत में प्रतीक पूजा का आरम्भ और विकास- साँवलिया बिहारीलाल वर्मा पृ.सं.- 134*
   बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना, नवम्बर 1974
3. *वही पृ.सं. - 135-136*
4. *ए गाईड टू द स्कल्पचर्स इन द इण्डियन म्यूजियम-प्प् - एन.जी. मजुमदार.पृ.सं. 91*
5. *वही पृ. सं. - 93*
6. *विविध रूपा बौद्ध-देवी - श्री निखिलेश शास्त्री (कादम्बिनी मई-1961)*
7. *प्राचीन भारत में धर्म एवं विभिन्न धार्मिक संप्रदाय (150 बी.सी.से -650 ए.डी. तक)*
   डॉ. कल्पना श्रीवास्तव, पृ.सं. 106 बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना, जून 2015
8. *प्राचीन भारत - सौरभ कुमार चौबे, पृ.सं. 280, अल्लापुर प्रयागराज संशोधित संस्करण फरवरी 2021*
9. *प्राचीन भारत में धर्म एवं विभिन्न धार्मिक सम्प्रदाय - डॉ. कल्पना श्रीवास्तव पृ.सं. 116*
10. *बौद्ध धर्म और बिहार - श्री हवलदार त्रिपाठी, पृ.सं. - 205*
11. *हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इंडोनेशियन आर्ट-ए.के. कुमार स्वामी, चित्र - 161*
    हिस्ट्री ऑफ फाइन आर्टस इन इण्डिया एण्ड सीलोन - बी.ए.स्मिथ पृ.सं. 168-169, प्लेट - XXXVlll.
12. *प्राचीन भारत में धर्म एवं विभिन्न धार्मिक सम्प्रदाय - डॉ. कल्पना श्रीवास्तव पृ.सं. 107, 108*
13. *द कलासिकल एज - आर.सी. मजुमदार, पृ.सं. 382*
14. *भारत में प्रतीक पूजा का आरंभ और विकास - साँवलिया बिहारी लाल वर्मा, पृ.सं. 138, 139*